माथुरी और अन्य

बनाम

पंजाब राज्य

(पी.बी. गजेन्द्रगढ़कर और के.सी. दास गुप्ता जेजे.)

भारतीय दंड संहिता (1860 का अधिनियम 65), एसएस 149 और 441 और संहिता सिविल प्रक्रिया (1900 का अधिनियम 5) O.21, आर.आर. 24 और 25-कब्जे के लिए डिक्री-निष्पादन वारंट की अवधि समाप्त-मकान मालिक द्वारा कब्ज़ा करने का प्रयास-यदि आपराधिक अतिचार हो "परेशान करने का इरादा", का अर्थ - किरायेदार द्वारा प्रतिरोध-यदि विधि विरूद्ध जमाव है।

अपीलकर्ता (मुख्य अपील में) पर कुछ अन्य लोगों के साथ भारतीय दंड संहिता की धारा 148, 302 और 307 सपठित धारा 149 के तहत अपराधों के लिए विचारण चलाया गया। घटना की ओर अग्रसर उनका परीक्षण इस प्रकार था कि कुछ मकान मालिको को कब्जे के लिए डिक्री थी व डिक्री के निष्पादन के लिए वारंट के साथ और पुलिस की सहायता से उन्होंने किरायेदारों को बेदखल करने की कोशिश की। वारंट के निष्पादन की अवधि समाप्त हो चुकी थी। अपीलकर्ताओं सहित एक बड़ी हथियारबंद भीड़ ने विरोध किया और जिला मजिस्ट्रेट के आदेश पर पुलिस ने गोलीबारी शुरू कर दी। दस व्यक्ति भीड़ से और दूसरे पक्ष से दो लोगों की

मौत हो गई और कई लोग घायल हुए। भीड़ के हट जाने के बाद घटना स्थल पर अपीलकर्ता घायल अवस्था में पड़े हुये पाये गये। सत्र न्यायाधीश ने सभी अपीलकर्ताओं को भारतीय दंड संहिता की धारा 148 एवं धारा 304 भाग II सपठित धारा 149 और धारा 326/149, 324/149 एवं 532/149 के लिए सात साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई और बाकी सभी को अपीलकर्ताओं के रूप में बरी कर दिया गया।

अपीलकर्ताओं के साथ ही राज्य ने भी बिना सफलता के उच्च न्यायालय में अपील की। इसके बाद दोनों पक्षों ने वर्तमान अपील दाखिल की।

अपीलकर्ताओं (अभियुक्तों) की ओर से यह तर्क दिया गया कि चूंकि निष्पादन वारंट की तारीख समाप्त हो गई थी भूमि स्वामियों द्वारा भूमि पर कब्ज़ा करने का प्रयास यह आपराधिक अतिचार की श्रेणी में आया और अपीलकर्ता कानूनन उनका विरोध करने के हकदार थे और इसलिए उन्होंने विधि विरूद्ध जमाव नहीं किया और कथित अपराधों को कारित करने का उनका कोई उद्देश्य नहीं था।

अवधारित, (i) आदेश 21 नियम 24 के उपनियम (3) सिविल प्रक्रिया संहिता विधायिका का आशय स्पष्ट दर्शित करता है कि निष्पादन को इस उद्देश्य के लिए प्रक्रिया पर निर्दिष्ट तिथि तक पूरा किया जाना चाहिए अन्यथा "जिस पर या उससे पहले इसे निष्पादित किया जाएगा"

शब्दों के बल को नजरअंदाज करना होगा। नियम 25 में आने वाले शब्द "देरी का कारण" जिसके पहले इसे क्रियान्वित किया जाएगा जिसे सामान्य तौर पर एक साधारण व्याकरणिक व्याख्या पर प्रक्रिया को अदालत में वापस करने में देरी को संदर्भित किया जा सकता है। वर्तमान मामले में वारंट में उल्लिखित तिथि की समाप्ति के कारण घटना की तारीख को वारंट निष्पादन योग्य नहीं रह गया था।

आनंद लाल बेरा बनाम द एम्प्रेस, आई.एल.आर. 10 कलकत्ता (1884)18, चेल्ली लचन्ना बनाम द एम्परर, ए.आई.आर. 1942 पटना 480, नन्दलाल बनाम एम्परर, ए.आई.आर. 1924 नागपुर 68 एवं किशोरी लाल बनाम एम्परर ए.आई.आर 1934 इलाहबाद 1016, का उल्लेख किया गया है।

(ii) यह सामान्य तथ्य है कि प्रवेश करने वाला व्यक्ति यह जानता हो कि प्रवेश से वह कब्जाधारी को परेशान करेगा। इसके लिए यह आवश्यक नहीं है कि उसका इरादा उसे परेशान करना हो जैसा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 441 में वर्णित है। यह स्थापित करने के लिए कि संपत्ति में प्रवेश परेशान करने, डराने या अपमान करने के इरादे से किया गया था, न्यायालय के लिए यह आवश्यक है कि वह उस कारण से संतुष्ट हो ऐसी झुंझलाहट, धमकी या अपमान प्रवेश का उद्देश्य था। कोर्ट को सभी प्रासंगिक परिस्थितियाँ ध्यान में रखनी होगी जिसमे यह ज्ञान की

उपस्थिति भी शामिल है, कि प्रवेश के स्वाभाविक परिणाम इस तरह के कष्टप्रद, धमकी या अपमान भी होगे और इस तरह कि झुंझलाहट आदी के कारण होने के अलावा किसी और चीज़ की संभावना भी शामिल है। वर्तमान मामले की सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए निचली अदालतों का यह मानना सही था कि आपराधिक अतिचार नहीं किया गया था और भूस्वामियों के कृत्य से व अन्यों के संपत्ति में प्रवेश से कोई भय कारित हुआ हो और बचाव पक्ष की दलील खारिज कर दी कि इकट्ठा होनें वाले लोगों का उद्देश्य अतिचार के खिलाफ संपत्ति की रक्षा करना था।

एम्परर बनाम लक्ष्मण रघुनाथ 26 मुम्बई 558, सेल्लामुथु सर्वाइगरन बनाम पल्लुमुथु करुप्पन, आई.एल.आर. 35 मद्रास 186 और केसर सिंह बनाम प्रेम बल्लभ, ए.आई.आर. 1950 इलाहाबाद 157, अस्वीकृत।

भगवंत बनाम केदारी, 25 बॉम्बे 202, एम्परर बनाम डी 'कुन्हा, 37 बी.एल.आर. 880, निज़ामुद्दीन बनाम जिन्नात हुसैन, ए.आई.आर. 1948 कलकत्ता 130, सतीश चंद्र मोदक बनाम द किंग, ए.आई.आर. 1949 कलकत्ता 107, बाटा कृष्णा घोष बनाम राज्य, ए.आई.आर. 1957 कलकत्ता 385, राज्य बनाम.अब्दुल सकूर, ए.आई.आर. 1960 कलकत्ता 189, रानी साम्राज्ञी बनाम रायपदायाची, 19 मद्रास 240 और वुलप्पा बनाम भीमा राव, आई.एल.आर. 41 मद्रास 156, को स्वीकृत किया गया।

(iii) अपीलकर्ता केवल दर्शक नहीं थे बल्कि वे अपराध करने के सामान्य उद्देश्य से गैरकानूनी सभा में अपराध करने के लिए शामिल हुये थे। वे अपराध जिनके लिए उन्हें दोषी ठहराया गया और नीचले न्यायालयों द्वारा उन्हे सजा सुनाई गई। राज्य का तर्क (अपनी अपील में) जो कि धारा 302 के तहत अपराध कारित किया गया, को खारिज कर दिया गया। विचारण न्यायालय द्वारा पारित सजाओ में यह न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करेगा। विशेष तथ्यों और परिस्थितियों के कारण छः महिला अपीलकर्ताओं और दो पुरुषों की सजा, भुगती हुई सजा तक सीमित की जाती है उनकी अत्यधिक वृद्धावस्था के कारण राज्य की अपील खारिज की जाती है।

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकार आपराधिकअपील सं 93 और 142 सन 1962।

विशेष अनुमति द्वारा अपील निर्णय व आदेश दिनांक 15 दिसंबर, 1961, पंजाब उच्च न्यायालय की आपराधिक अपील सं. 417 और 552 सन 1961।

आर.एल. कोहली, अपीलार्थियों के लिए (फौजदारी अपील सं. 93/1962 में और प्रत्यर्थीयों के लिए (फौजदारी अपील सं. 142/1962 में)

एच.आर. खन्ना और आर.एन. सचथी, अपीलार्थी के लिए (फौजदारी अपील सं 142/1962) और प्रत्यर्थी (फौजदारी अपील सं 93/1962 में)

न्यायालय का निर्णय 11 दिसंबर, 1963 को सुनाया गया।

दास गुप्ता जे. - 7 जून, 1960 को मोहनगढ़ नामक गाँव में भू-स्वामियों/जमीदारों द्वारा प्राप्त निष्कासन/बेदखली के आदेशों के निष्पादन में कुछ जमीनों पर कब्जा देने को लेकर एक दुखद घटना घटी। जिसमें बारह लोगों ने अपनी जान गंवाई और कई अन्य को गंभीर चोटें आई। घायलों में कुछ सदस्य पुलिस बल के कर्मचारी भी थे, जो भूमि का कब्जा दिलवाने के लिए वहाँ गए थे। उनचालीस लोग मुकदमे के विचारण के लिए सत्र न्यायालय में धारा 148, 302/149 और 307/149 भा.दं.सं. के तहत भेजे गये थे।

अभियोजन पक्ष का मामला यह था कि डिक्री निष्पादन में कब्जे के वितरण के लिए वारंट 5 अप्रैल, 1960 की शुरुआत में कई डिक्री धारकों के पक्ष में कई आदेश जारी किए गए थे। राजस्व अधिकारियों द्वारा आदेशों को निष्पादित करने के बार-बार प्रयास असफल रहे। यह तब हुआ जब 7 जून, 1960 को उन वारंटों को निष्पादित करने का प्रयास किया जा रहा था। उस समय ग्रामीणों सहित किरायेदारों, जिन्हें उनकी भूमि से बेदखल किया जाना था, और उनके दोस्तों और सहानुभूति रखने वालों ने डिक्री धारकों और उनके साथ आए पुलिस दल पर हमला कर दिया। ऐसा कहा जाता है कि डिक्री धारकों की ओर से रतन सिंह और उनके चार साथी धरम सिंह, अभय राम, भरत सिंह और निहाल सिंह ने प्रभु के खेत में प्रवेश किया, जो निर्णित् ऋणियों में से एक था और उसके दो हल दो बेलों के जोड़े भी साथ गए थे। जब वे खेत में कुछ दूरी तक गए थे, तब लाठियों, जेलियों और

गंडसों से लैस पुरुषों और महिलाओं की लगभग 200 शक्तिशाली भीड़ चिल्लाते हुए आई, "रतन सिंह को मार डालो और कब्जा न होने दो।" उप-मंडल मजिस्ट्रेट, संगरूर, जो पार्टी के साथ थे, ने एक लाउड स्पीकर पर घोषणा की कि उन्होंने भीड़ को गैरकानूनी सभा घोषित किया और उसे तितर-बितर करने का आह्वान किया। हालाँकि भीड़ में से एक बड़ी संख्या रतन सिंह और उनकी पार्टी तक पहुँचने में कामयाब रही और हालाँकि निहाल सिंह भागने में सफल रहे। अन्य चार पर भी भीड द्वारा हमला किया गया। उप-खण्ड मजिस्ट्रेट के आदेश पर पुलिस ने भीड पर लाठी चार्ज किया। परंतु भीड ने जवाबी हमला किया। हमले के दौरान सहायक उप निरीक्षक गुरूदयाल सिंह के चोट आई और कुछ दंगाई उसे ले जाने की कोशिश करने लगे। परिस्थिति को संभालने का प्रयास करने के लिए उप निरीक्षक सीताराम ने अपने रिवोल्वर से दो शॉट किये। उप-खण्ड मजिस्ट्रेट ने पुलिस को फायर करने की अनुमित दी। चार लोगों की एक पार्टी ने दो गोलियां चलाई । इसके बाद 14 पुलिसकर्मियों ने गोलियां चलाई तो भीड भाग गई। उनके दस सदस्य मरे हुये थे और उनके खेत में कुछ घायल पडे थे। रतनसिंह और उसके तीन साथी भी खेत में घायल पडे थे।

रतन सिंह और धर्मसिंह अपनी चोटों के कारण मर गये। कुछ पुलिसकर्मियों को भी चोटें आई। सभी दस अपीलार्थी खेत में घायल अवस्था में पड़े पाये गये। वे तथा बड़ी संख्या में अन्य व्यक्तियों को गिरफ्तार किया

गया और अंततः, जैसा कि पहले ही बताया गया है, उनचालीस व्यक्तियों को विचारण हेतु सत्र न्यायालय मे भेजा गया।

सभी अभियुक्तों ने दोषी होना स्वीकार नहीं किया। उनमें से कईयों ने बचाव के लिए कहा कि वे घटना स्थल पर थे ही नहीं और उन्हें कहीं और चोटें लगी थीं, सभी अभियुक्तों के लिए यह सामान्य मामला था कि घटनास्थल पर कोई विधि विरूद्ध सभा नहीं हुई। यह दलील दी गई थी कि कब्जे वाले किरायेदार आपराधिक अतिचार के खिलाफ अपनी संपत्ति की रक्षा के लिए खेत में आए थे और जो लोग इकट्ठा हुए थे उनका उद्देश्य ऐसे अतिचार के खिलाफ अपनी संपत्ति की रक्षा करने के अलावा और कुछ नहीं था। आगे यह भी कहा गया कि निष्पादन की तारीख पहले ही समाप्त हो जाने के बाद पुलिस ने कब्जे के वारंट को निष्पादित करने के लिए जमींदारों के लोगों के साथ हाथ मिलाया। यह पुलिस ही थी जो ज्यादती की दोषी थी, लेकिन जब यह पता चला कि पुलिस की गोलीबारी में बड़ी संख्या में लोग मारे गए हैं और कई लोग घायल हुए हैं तो ग्रामीणों को अंधाधुंध गिरफ्तार किया गया और झूठा फंसाया गया। साक्ष्यों पर विचार करने पर, विद्वान सत्र न्यायाधीश ने अभियोजन पक्ष के मामले को काफी हद तक साबित पाया और निजी बचाव के अधिकार की अभियुक्त की याचिका को खारिज कर दिया।

और यह माना कि रतन सिंह और अन्य की हत्या करने के सामान्य उद्देश्य से एक गैरकानूनी सभा हुई थी, इस सामान्य उद्देश्य के अभियोजन के तहत विधि विरूद्ध जमाव के सदस्यों द्वारा रतन सिंह और धरम सिंह की मृत्यु कारित कर धारा 304 भाग II सपठित धारा 149 भा.दं.सं. के अपराध विधि विरूद्ध जमाव द्वारा किये गये और अन्तर्गत धारा 326, 324 और 323 के तहत भी अपराध किए गए जो सामान्य उद्देश्य की पूर्ति में किये गये थे। उन्होंने आगे पाया कि इन 10 अपीलकर्ताओं के खिलाफ यह साबित हो गया कि वे उस सभा के सदस्य थे और खतरनाक हथियारों से लैस होकर दंगा किया था। इसलिए, उन्होंने उन सभी को भारतीय दंड संहिता की धारा 148 और धारा 304 भाग II सपठित धारा 149 के तहत अपराध का दोषी ठहराया एवं धारा 326/149, 324/149, 323/149. धारा के तहत प्रत्येक अपराध के लिए एवं धारा 304 भाग II सपठित धारा 149 में उन्होंने इन 10 अपीलकर्ताओं को सात साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई। अन्य अपराधों के तहत कम सजाएं पारित की गईं और सभी सजाएं एक साथ चलाने का निर्देश दिया गया।

इन 10 आरोपियों ने अपनी दोषसिद्धि और सजा के खिलाफ पंजाब उच्च न्यायालय में अपील की । पंजाब राज्य ने भी आरोपियों के खिलाफ इस आधार पर अपील दायर की कि उन्हें धारा 302 सपठित धारा 149 के तहत दोषी ठहराया जाना चाहिए था न केवल धारा 304 भाग II सपठित धारा 149 के तहत।

अन्य उनतीस अभियुक्तों के संबंध में सत्र न्यायाधीश ने माना कि गैरकानूनी सभा में उनकी सदस्यता संदेह से परे साबित नहीं हुई है और तदनुसार उन्हें बरी कर दिया गया। पंजाब राज्य ने इस बरी किये जाने के विरुद्ध भी उच्च न्यायालय में अपील की।

उच्च न्यायालय सत्र न्यायाधीश के निष्कर्षों से सहमत हुआ और आरोपी की अपील और पंजाब राज्य की अपील को भी खारिज कर दिया।

दस अभियुक्तों ने इस न्यायालय की विशेष अनुमति से यह अपील (सीआर ए संख्या 93/1962) प्रस्तुत की है। पंजाब राज्य ने भी उच्च न्यायालय के फैसले के खिलाफ विशेष अनुमति (सीआर अपील संख्या 142/1962) द्वारा अपील दायर की जो कि धारा 302 सपठित धारा 149 के तहत हैं, जिसमें अपराध साबित नहीं हुआ था।

दस अभियुक्तों की अपील के समर्थन में हमारे सामने उठाया गया मुख्य तर्क यह है कि खेत में कोई भी विधि विरूद्ध जमाव नहीं हुआ था, क्योंकि रतन सिंह और अन्य जो खेत में गए थे आपराधिक अतिचार के दोषी थे और यह उचित होगा कि जो ग्रामीण वहां इकट्ठे हुए थे उनका उद्देश्य केवल इस तरह के अतिचार के खिलाफ अपनी संपत्ति की रक्षा करना था और जैसा कि आरोप लगाया गया है, अपराध करने का कोई उद्देश्य नहीं था। यह तर्क देते हुए कि रतन सिंह और अन्य के कृत्य आपराधिक अतिक्रमण के समान हैं, दस आरोपी व्यक्तियों के विद्वान वकील

श्री कोहली ने इस तथ्य पर जोर दिया है कि कब्जे की डिलीवरी के लिए वारंट के निष्पादन की आखिरी तारीख कुछ समय के लिए अप्रैल 1960 में थी, इसलिए 7 जून, 1960 को वे कानून में निष्पादन योग्य न थी।

हालाँकि सत्र न्यायालय ने इस तर्क को स्वीकार कर लिया कि वारंट 7 जून, 1960 से पहले निष्पादन योग्य नहीं रह गए थे और उच्च न्यायालय इससे सहमत था, श्री खन्ना, जो पंजाब राज्य की ओर से हमारे सामने पेश हुए थे, ने प्रस्ताव की शुद्धता को चुनौती दी है। हमें अदालतों द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण की सत्यता के बारे में कोई संदेह नहीं है, जिसका उल्लेख नीचे किया जा सकता है, जो कि भारत में सभी उच्च न्यायालयों के निर्णयों की एक लंबी श्रृंखला द्वारा समर्थित है।

आनंद लाल बेरा बनाम एम्प्रेस (आई.एल.आर.10 कलकत्ता [1884] पेज 18) चेली लचन्ना और अन्य बनाम एम्परर (ए.आई.आर. पटना पेज 480) नंद लाल बनाम एम्परर (ए.आई.आर.1924 नागपुर पेज 68) किशोरी लाल और अन्य बनाम एम्परर (ए.आई.आर.1934 इलाहाबाद पेज 1016)।

सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 21 के नियम 24 और 25 स्थिति को स्पष्ट करते हैं। नियम 24 डिक्री के निष्पादन के लिए प्रक्रिया के मुद्दे से संबंधित है और उपनियम 3 में प्रावधान है कि ऐसी प्रत्येक प्रक्रिया में "एक दिन निर्दिष्ट किया जाए कि इसे किस दिन या उससे पहले निष्पादित किया जाएगा।" नियम 25 फिर यह कहता है कि जिस अधिकारी को

प्रक्रिया के निष्पादन की जिम्मेदारी सौंपी गई है, वह उस पर तारीख और जिस तरीके से इसे निष्पादित किया गया था उसका समर्थन करेगा और इसके अलावा यदि नवीनतम दिन निर्दिष्ट किया गया है उसे वापस करने की प्रक्रिया में देरी के कारण को पार कर लिया गया है या यदि इसे निष्पादित नहीं किया गया है तो इसे क्यों निष्पादित नहीं किया गया है, और इस तरह के समर्थन के साथ प्रक्रिया को न्यायालय में वापस कर दिया जाएगा। श्री खन्ना ने तर्क दिया है कि शब्द "नियम 25 में देरी का कारण" ऐसी स्थिति पर विचार करता है जहां प्रक्रिया नियम 24 के तहत उल्लिखित तिथि के बाद निष्पादित की गई है। हमारी राय में इस विवाद में कोई दम नहीं है यदि नियम 25 को समग्र रूप से और उपनियम ३ में प्रावधान के आलोक में पढ़ा जाए। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि उपनियम३ नियम 25 में उल्लिखित "देरी" प्रक्रिया को वापस करने में देरी को संदर्भित करता है चाहे निष्पादन के बाद या उसके बिना, न कि निष्पादन में किसी देरी को। नियम 24(3) विधायिका का आशय स्पष्ट करता है कि इस प्रयोजन के लिए प्रक्रिया में निर्दिष्ट तिथि तक निष्पादन पूरा हो जाना चाहिए। अन्यथा धारण करना शब्दों की शक्ति को नजरअंदाज करना होगा, "जिस पर या उससे पहले इसे निष्पादित किया जाएगा"। यह तर्कसंगत नहीं है कि नियम 24 में उपलब्ध कराने के बाद कि प्रक्रिया को उस उद्देश्य के लिए उस पर निर्दिष्ट तिथि पर या उससे पहले निष्पादित किया जाना चाहिए, विधायिका उस तिथि के बाद भी निष्पादन की अनुमति देकर

"निष्पादित किया जाएगा" इन शब्दों के प्रभाव को पूर्ववत करने के लिए आगे बढ़ेगी। "विलम्ब का कारण" शब्दों के प्रयोग में ऐसी मंशा पढ़ने का कोई औचित्य नहीं है। ये शब्द, जैसा कि हम पहले ही बता चुके हैं, सामान्य व्याकरणिक व्याख्या के आधार पर प्रक्रिया को न्यायालय में वापस भेजने में देरी को संदर्भित किया जा सकता है। इस प्रकार हमारी स्पष्ट राय है कि वर्तमान मामले में वारंट जहां अप्रैल में एक तारीख को उस तारीख के रूप में निर्दिष्ट किया गया था जिस दिन या उससे पहले उन्हें निष्पादित किया जाना था, 7 जून, 1960 से पहले कानून में निष्पादन योग्य नहीं थे।

तो फिर सवाल यह है क्या जब रतन सिंह और अन्य लोग उस भूमि पर गए, जिस पर वारंट के तहत कब्जा लिया जाना था, तो वे आपराधिक अतिचार का अपराध कर रहे थे। इस प्रश्न का उत्तर इस बात पर निर्भर करता है कि क्या संपत्ति में प्रवेश करते समय इन व्यक्तियों ने "अपराध करने के इरादे से या संपत्ति पर कब्जा करने वाले व्यक्तियों को डराने, अपमानित करने या परेशान करने" के इरादे से काम किया था। यह सुझाव नहीं दिया गया है कि प्रवेश किसी अपराध को करने या संपत्ति पर कब्ज़ा करने वाले व्यक्तियों को डराने या अपमानित करने के इरादे से किया गया था। हालाँकि, श्री कोहली द्वारा दृढ़तापूर्वक तर्क दिया गया है कि वारंट के कथित निष्पादन में कब्जे वाले लोगों को बेदखल करने के उद्देश्य से इन संपत्तियों पर कब्जा करने में, जो निष्पादन योग्य नहीं रह गए थे, रतन

सिंह और अन्य को "परेशान करने के इरादे से" कार्यवाही की होगी। यह तर्क दिया जाता है कि ये व्यक्ति अच्छी तरह से जानते थे कि उनके कार्यों का स्वाभाविक और अपरिहार्य परिणाम यह होगा कि कब्जे वाले व्यक्ति नाराज हो जाएंगे। इसलिए विद्वान वकील के अनुसार यह आवश्यक है कि उनका इरादा उन व्यक्तियों को परेशान करने का था।

"यह प्रस्ताव कि प्रत्येक व्यक्ति अपने कार्य के स्वाभाविक परिणामों का इरादा रखता है, जिस पर विद्वान वकील भरोसा करते हैं, किसी विशेष कार्य को करते समय व्यक्तियों के इरादे का पता लगाने के लिए अक्सर एक सुविधाजनक और सहायक नियम होता है। हालाँकि इस प्रस्ताव को एक बाध्यकारी नियम के रूप में स्वीकार करना गलत है जो सभी अवसरों और सभी परिस्थितियों में लागू होना चाहिए। निर्णय के लिए अंतिम प्रश्न यह है कि क्या कोई कार्य किसी विशेष इरादे से किया गया था, कार्य के प्राकृतिक परिणाम सहित सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखा जाना चाहिए। यह सोचना भी जायज है कि जब धारा 441 संपत्ति पर कब्ज़ा करने वाले किसी भी व्यक्ति को "अपराध करने के इरादे से, या डराने, अपमानित करने या परेशान करने के इरादे से" संपत्ति में प्रवेश करने की बात करता है, यह कार्रवाई में मुख्य इरादे की बात करता है न

कि किसी सहायक इरादे की जो मौजूद हो सकता है। भारतीय दंड संहिता में प्रयुक्त शब्द "इरादे" के अर्थ की सबसे अच्छी व्याख्या 1900 में भगवंत बनाम केदारी (आई.एल.आर. 25 बॉम्बे 202) में बॉम्बे उच्च न्यायालय के एक फैसले में दी गई थी। भारतीय दंड संहिता की धारा 25 में "कपटपूर्ण ढंग से" शब्द की परिभाषा की जांच करना। अर्थात्, "एक व्यक्ति धोखाधड़ी से कोई काम करता है, यदि वह धोखाधड़ी के इरादे से ऐसा करता है, लेकिन अन्यथा नहीं, तो ऐसा कहा जाता है।" बैटी जे. ने रिपोर्ट के पृष्ठ 226 पर इस प्रकार कहा:-

"शब्द 'आशय' अपनी व्युत्पत्ति से, तीरंदाजी के लिए रूपक संकेत प्रतीत होता है, और इसका तात्पर्य "उद्देश्य" है और इस प्रकार यह एक आकस्मिक या केवल संभावित परिणाम को नहीं दर्शाता है - शायद एक असंभव घटना के रूप में, लेकिन वांछित नहीं है, बल्कि इसका अर्थ है एक उद्देश्य जिसके लिए प्रयास किया गया है - और इस प्रकार इसका संदर्भ उस चीज़ से है जिसे प्रमुख उद्देश्य कहा गया है, जिसके बिना कार्रवाई नहीं की जा सकती थी।"

तथ्य यह है कि ये टिप्पणियाँ यह सुनिश्चित करने के उद्देश्य से की गई थीं कि "धोखाधड़ी" शब्द का क्या अर्थ है, इससे उनका सामान्य मूल्य और शुद्धता कम नहीं होती है। हमारी राय में, "आशय" शब्द के अर्थ के संबंध में विद्वान न्यायाधीश की टिप्पणियाँ सही दृष्टिकोण को इंगित करती हैं यह निर्णय लेने में अपनाने के लिए कि क्या आपराधिक अतिचार के अपराध का आवश्यक घटक यह है कि प्रविष्टि "अपराध करने या डराने, अपमानित करने या परेशान करने के इरादे से" संपत्ति के कब्जे वाले किसी भी व्यक्ति को स्थापित किया गया है। इससे यह पता चलता है कि केवल यह तथ्य कि प्रविष्टि का स्वाभाविक परिणाम कब्जे वाले व्यक्ति को परेशान करने के रूप में जाना जाता था, जरूरी नहीं कि यह दिखाएगा कि प्रविष्टि "परेशान करने के इरादे से" की गई थी। यह तथ्य कि स्वाभाविक परिणाम क्या होगा और प्रवेश करने वाले व्यक्ति को इसकी जानकारी होने की धारणा केवल एक परिस्थिति होगी जिसे प्रश्न का निर्णय करने के उद्देश्य से अन्य परिस्थितियों के साथ विचार किया जाना चाहिए कि प्रवेश किस इरादे से किया गया था . आश्चर्यजनक रूप से बॉम्बे हाई कोर्ट ने कुछ साल बाद ही एम्परर बनाम लक्ष्मण रघुनाथ (आई.एल.आर. 26 बॉम्बे 558) में धारा 448 भा.दं.सं. के तहत एक मामला था। भारतीय दंड संहिता की धारा 448 के अनुसार आपराधिक अतिचार के अपराध के उद्देश्य के लिए आवश्यक इरादे को साबित करने के लिए यह दिखाना पर्याप्त है कि आदमी ने यह जानते हुए कार्य किया कि संभावित परिणाम शिकायतकर्ता को परेशान

करेगा। कोर्ट का फैसला सुनाने वाले फुल्टन जे. ने कहा कि अथाॅरिटी के परिणाम से प्रतीत होना चाहिए कि "हालांकि ऐसी कोई धारणा नहीं है कि किसी व्यक्ति का इरादा केवल उसकी कार्रवाई का एक संभावित परिणाम है या ऐसा परिणाम है जो यथोचित निश्चित होने के बावजूद ज्ञात नहीं है। उसके लिए ऐसा होने पर भी, यह माना जाना चाहिए कि जब कोई व्यक्ति स्वेच्छा से कोई कार्य करता है, उस समय यह जानते हुए कि घटनाओं के प्राकृतिक क्रम में एक निश्चित परिणाम आएगा, वह उस परिणाम को लाने का इरादा रखता है। यह नोटिस करना उचित है कि फुल्टन जे. भगवंत बनाम केदारी (आई.एल.आर. 25 बॉम्बे 202) में पहले के फैसले में एक पक्ष थे, हालांकि उस मामले में "आशय" शब्द के अर्थ के बारे में जो कहा गया था उसका कोई संदर्भ नहीं दिया गया है। बाद वाले मामले में यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि लक्ष्मण रघुनाथ के मामले में कानून के इस दृष्टिकोण का पालन हाल के वर्षों में बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा नहीं किया गया है। एम्परर बनाम डी' कुन्हा (37 बी.एल.आर. 880) में यह समझाया गया था कि जहां ज्ञान का प्रश्न हो वहां कार्य का स्वाभाविक परिणाम क्या होगा, इसे पार्टी की मंशा तय करते समय ध्यान में रखा जा सकता है, यह केवल उन परिस्थितियों में से एक है जिन पर विचार किया जाना है।

यह विचार कि झुंझलाहट कार्य का स्वाभाविक परिणाम है और यह कार्य करने वाले व्यक्ति को ज्ञात है कि यह स्वाभाविक परिणाम है, यह साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं है कि प्रवेश परेशान करने के इरादे से

किया गया था, ऐसा लगातार कलकत्ता उच्च न्यायालय में लिया गया है। देखें। निज़ामुद्दीन बनाम जिन्नात हुसैन (ए.आई.आर.1948 कलकत्ता 130), सतीश चंद्र मोदक बनाम द किंग (ए.आई.आर.1949 कलकत्ता 107), बाटा कृष्णा घोष बनाम राज्य (ए.आई.आर.1957 कलकत्ता 385), राज्य बनाम अब्दुल सकुर (ए.आई.आर.1960 कलकत्ता 189)।

1896 में मद्रास उच्च न्यायालय ने रानी महारानी बनाम रायपदायाची (9 मद्रास 240) के मामले में भी यही दृष्टिकोण अपनाया था जैसा कि 1912 में सेलामुथु सर्वाइगरन बनाम पल्लुमुथु करुप्पन(आई.एल.आर.35 मद्रास 186) में उस उच्च न्यायालय द्वारा एक अलग दृष्टिकोण अपनाया गया था, इस मामले की जांच 1917 में वुलप्पा बनाम भीमा रो (आई.एल.आर. 41 मद्रास 156) में उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा की गई थी। पूर्ण पीठ ने कहा रानी महारानी बनाम रायपदायाची(9 मद्रास 240) (सुप्रा) में सही दृष्टिकोण अपनाया गया था और विधायिका का इरादा धारा 441 में नहीं था, कि परिणाम को जानते हुए कार्य करना दंडनीय होना चाहिए। कुमारस्वामी शास्त्रीयर जे. ने इस तथ्य पर जोर दिया कि जहां भी दंड संहिता किसी व्यक्ति को परिणामों के ज्ञान के लिए उत्तरदायी बनाना चाहती है, वहां स्पष्ट रूप से ऐसा कहा गया है, जैसा कि धारा 118 से 120, 153, 154, 217, 293 आदि में है। । विद्वान न्यायाधीश सर विलियम मार्क की टिप्पणी (कानून के तत्व, पैरा 222) से सहमत हुए कि एक परिणाम का पालन होगा या एक ज्ञान "कि इसके बिना पालन करने

की संभावना है कोई भी इच्छा जिसका पालन किया जाना चाहिए वह मन का एक दृष्टिकोण है जो इरादे से अलग है................'' इसके बाद मद्रास उच्च न्यायालय ने कानून के इस दृष्टिकोण की पालना की है। इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने एम्परर बनाम मोतीलाल(आई.एल.आर.47 इलाहाबाद 855) में इस मामले पर समान दृष्टिकोण अपनाया। श्री कोहली ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय के एक फैसले केसर सिंह बनाम प्रेम बल्लभ (ए.आई.आर 1950 इलाहाबाद 157) पर भरोसा किया गया है जिसमें विद्वान न्यायाधीश (देसाई जे) ने कहा था कि जहां आरोपी के कृत्य का संभावित परिणाम शिकायतकर्ता को परेशान करना था। यह माना जाएगा कि उन्होंने उस इरादे से अतिचार किया था और चूंकि उस इरादे का खंडन नहीं किया गया था, इसलिए आरोपी को धारा 447 के तहत सही तरीके से दोषी ठहराया गया था।

हम सम्मान के साथ सोचते हैं कि कानून का यह कथन और लक्ष्मण रघुनाथ के मामले (आई.एल.आर 26 बाॅम्बे 558) और सेलामुथु सर्वाइगरन के मामले (आई.एल.आर 35 मद्रास 186) में समान बयान बिल्कुल सटीक नहीं हैं। हमारी राय में, कानून में सही स्थिति इस प्रकार बताई जा सकती है यह स्थापित करने के लिए कि संपत्ति में प्रवेश परेशान करने, डराने या अपमान करने के इरादे से किया गया था, न्यायालय के लिए यह संतुष्ट होना आवश्यक है कि इस तरह की परेशानी पैदा हो रही है कि प्रवेश का उद्देश्य डराना या अपमान करना था। उस उद्देश्य के लिए

केवल यह दिखाना पर्याप्त नहीं है कि प्रवेश का स्वाभाविक परिणाम झुंझलाहट, धमकी या अपमान होने की संभावना थी, और यह संभावित परिणाम प्रवेश करने वाले व्यक्तियों को पता था। यह तय करने में कि क्या प्रवेश का उद्देश्य ऐसी झुंझलाहट, धमकी या अपमान का कारण था, न्यायालय को ज्ञान की उपस्थिति सहित सभी प्रासंगिक परिस्थितियों पर विचार करना होगा कि इसके प्राकृतिक परिणाम ऐसी झुंझलाहट, धमकी या अपमान होंगे और इसमें यह भी शामिल है इस तरह की धमकी, अपमान या झुंझलाहट के कारण के अलावा किसी और चीज की संभावना, प्रमुख इरादा होना जिसने प्रवेश को प्रेरित किया ।

वर्तमान मामले के तथ्यों पर इन सिद्धांतों को लागू करते हुए, हम संतुष्ट हैं कि नीचली अदालतों का यह मानना सही हैं कि रतन सिंह और अन्य लोगों का इरादा परेशान करने का नहीं था। यह सच हो सकता है कि वे जानते थे कि परिणामस्वरूप झुंझलाहट होगी। चूंकि वे वारंट निष्पादन के साथ थे, इसलिए यह सोचना उचित है कि जिस इरादे ने उनकी कार्रवाई को प्रेरित किया और हावी किया, वह वारंट को निष्पादित करना था। हम सोचते हैं कि नीचली अदालतें अपने विचार में सही थीं कि रतन सिंह और अन्य से यह जानने की उम्मीद नहीं की जा सकती कि वारंट कानून में निष्पादन योग्य नहीं रह गए हैं। सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि नीचली अदालतें अपने विचार में सही थीं कि रतन सिंह एवं संपत्ति में प्रवेश करने वाले अन्य लोगों के कृत्यों से

आपराधिक अतिचार नहीं हुआ था या इसकी आशंका नहीं थी और बचाव पक्ष की दलील को सही ढंग से खारिज कर दिया था कि जो लोग एकत्र हुए थे उनका उद्देश्य अतिचार के विरुद्ध संपत्ति की रक्षा करना था।

इसलिए यह मानने में कोई कठिनाई नहीं थी कि ग्रामीणों की सभा विधि विरूद्ध सभा थी जिसका सामान्य उद्देश्य रतन सिंह और अन्य लोगों की हत्या करना था जो उन्हें बेदखल करना चाहते थे।

यह हमें विधि विरूद्ध सभा में व्यक्तिगत आरोपी की भागीदारी के सवाल पर लाता है। चूंकि यह स्पष्ट रूप से तथ्य का प्रश्न है तो यह अदालत आमतौर पर इसकी जांच करने से इंकार कर देती है। हालाँकि श्री कोहली की शिकायत है कि इस प्रश्न पर उच्च न्यायालय के निष्कर्ष साक्ष्यों को पढ़ने में हुई गंभीर त्रुटि के कारण दूषित हैं। साक्ष्य दिया गया है, जिसकी सत्यता पर अब कोई विवाद नहीं किया जा सकता है, कि जब बाकी भीड़ अंततः तितर-बितर हो गई तो ये 10 आरोपी व्यक्ति घटना स्थल पर घायल अवस्था में पड़े हुये थे। बचाव पक्ष का सुझाव यह था कि फिर भी यह अच्छी तरह से हो सकता है कि वे घटना स्थल पर केवल यह देखने की जिज्ञासा से आए थे कि चीज़ें कैसे विकसित हुई। इस तर्क को खारिज करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों में से एक यह था कि यह "एक गैर-आधिकारिक व्यक्ति इकबाल सिंह (पी.डब्ल्यू. 9), मुंशी सिंह, हेड कांस्टेबल (पी.डब्ल्यू. 22), कौल सिंह, सहायक उपनिरीक्षक

(पी.डब्ल्यू. 24) के बयानों से भी साबित हुआ था और रंजीत सिंह, हेड कांस्टेबल (पी.डब्ल्यू. 26) ने कहा कि उनके कब्जे से जेली, गंडासा और लाठियां बरामद की गईं।" यदि यह वास्तव में साबित हो गया होता तो उच्च न्यायालय की यह टिप्पणी कि "उनके भीड़ में होने और हमले में भाग लेने के बारे में थोड़ा संदेह हो सकता था '' यह पूरी तरह से उचित होगा हालाँकि, श्री कोहली ने बताया है कि इन गवाहों के साक्ष्य वास्तव में इन अपीलकर्ताओं के कब्जे से किसी भी हथियार की बरामदगी को स्थापित नहीं करते हैं। सबूतों से पता चलता है कि ऐसे हथियार घायल व्यक्तियों के पास खेत में पड़े पाए गए और उन्हें कब्जे में ले लिया गया। ये बयान कि ये उनके कब्जे से बरामद किए गए थे, सच हैं, जो हथियारों की जब्ती के ज्ञापन में दिए गए थे जो तैयार किए गए थे और इनमें से कुछ गवाहों ने अपनी जाँच में इसी तरह के बयान दिए थे। हालाँकि जिरह में उन सभी ने स्वीकार किया कि इनमें से किसी भी अपीलकर्ता के पास से कोई बरामदगी नहीं हुई थी। यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि जब पुलिस की गोलीबारी के बाद भीड़ तितर-बितर हो गई, तो भीड़ में शामिल कुछ लोग मारे गए और कुछ घायल हो गए, कुछ हथियार भी खेत में छोड़ दिए गए। इनमें से कुछ खून से सने हुए थे। इसकी संभावना नहीं है कि ये मृत या घायल पड़े लोगों में से किसी के थे। हालाँकि जो स्पष्ट है वह यह है कि इनमें से किसी भी अपीलकर्ता के कब्जे से हथियार बरामद होना साबित नहीं हुआ है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि उच्च न्यायालय में अपील की सुनवाई

करने वाले विद्वान न्यायाधीशों ने सबूतों की उस सावधानी से जांच नहीं की, जितनी सावधानी से जांच करनी चाहिए थी।

विद्वान न्यायाधीशों द्वारा की गई गंभीर त्रुटि को देखते हुए हमने यह निर्णय लेने के लिए स्वयं साक्ष्यों की जांच करना आवश्यक पाया है, कि विधि विरूद्ध सभा में इन अपीलकर्ताओं की भागीदारी के संबंध में मौखिक गवाही स्वीकार की जानी चाहिए या नहीं। हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि इस साक्ष्य को स्वीकार किया जाना चाहिए। एक परिस्थिति जिसे नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता वह यह है कि, जिस स्थान पर ये अपीलकर्ता घायल अवस्था में पड़े पाए गए, वह गाँव के आबादी वाले हिस्से से काफी दूर थे। इसकी संभावना कम ही है कि जो ग्रामीण केवल जिज्ञासावश अपने घरों से बाहर निकले थे, वे इतनी दूर खेतों में जाएंगे। यह भी ध्यान देने योग्य है कि इन दस अपीलकर्ताओं में से कुछ किरायेदार निर्णित ऋणियों में से थे और बाकी उनके करीबी रिश्तेदार थे।

सभी परिस्थितियों पर विचार करने पर हम संतुष्ट हैं कि ये अपीलकर्ता केवल दर्शक नहीं थे, बल्कि सामान्य उद्देश्य के साथ विधि विरूद्ध सभा में शामिल हुए थे, जैसा कि अभियोजन पक्ष ने आरोप लगाया था कि सभा के कुछ सदस्यों द्वारा 304 भाग II धारा 326, 324 एवं 323 आई.पी.सी. की धारा के तहत वह अपराध कारित किया था। इनमें से जो सभी के सामान्य उद्देश्य के अनुसरण में एकत्र हुए थे, यह सबूतों द्वारा

स्पष्ट रूप से दिखाया गया है और हमारे सामने विवादित नहीं है। हम राज्य की अपील में राज्य की ओर से उठाए गए तर्क से सहमत होने में असमर्थ हैं कि रतन सिंह और धर्म सिंह की मृत्यु कारित करके भारतीय दंड संहिता की धारा 302 का अपराध किया गया। इसलिए हमारा निष्कर्ष यह है कि अपीलकर्ताओं को निम्न धाराओ 304 भाग II सपठित धारा149, धारा 326/149, 324/149 भारतीय दंड संहिता की धारा 323/149 के तहत सही तरीके से दोषी ठहराया गया है।

10 अपीलकर्ताओ की ओर से हमारे समक्ष अंतिम निवेदन यह है कि मामले की सभी परिस्थितियाें पर विचार करते हुये अपीलार्थियों को दी गई सजाएँ बहुत गंभीर हैं। सजा का प्रश्न विचारण न्यायालय के विवेक पर निर्भर करता है और यदि इसका न्यायिक रूप से प्रयोग किया गया है तो अपील में उच्च न्यायालय द्वारा सामान्य रूप से परेशान नहीं किया जाएगा। इस न्यायालय के पास अभी भी सामान्य रूप से विचारण न्यायालय द्वारा पारित और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई सजाओं में हस्तक्षेप करने का कम कारण है।

हालाँकि यह कहना कठिन है कि वर्तमान मामले में सजा के प्रश्न पर विवेक का प्रयोग न्यायिक रूप से किया गया है। इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि इन दस अपीलकर्ताओं में छह महिलाएं और चार पुरुष हैं। इन महिलाओं को कोई विशेष हिस्सा आवंटित नहीं किया गया है। मामले

की सभी परिस्थितियों में यह सोचना उचित है कि उन्होंने घटना में अग्रणी भूमिका नहीं निभाई, बल्कि खेत में तब आए जब उनके पुरुष लोग बाहर आए - आंशिक रूप से अपने खेतों को बचाने के लिए और आंशिक रूप से अपने पुरुषों को बचाने के लिए आये।ऐसा प्रतीत होता है कि न तो ट्रायल कोर्ट और न ही उच्च न्यायालय ने इन परिस्थितियों पर कोई ध्यान दिया और पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं को भी समान सजा सुनाई। इस मामले की विशिष्ट परिस्थितियों में हमारा मानना है कि महिलाओं के खिलाफ पारित सजा के सवाल पर हस्तक्षेप आवश्यक है। ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने अपने ऊपर लगाई गई सज़ा की अवधि दो साल और नौ महीने से अधिक समय तक पूरी कर ली है और उससे पहले लगभग 10 महीने तक हिरासत में रहे थे। मामले की सभी परिस्थितियों पर विचार करने पर हम इन महिला-अपीलकर्ताओं की सजा को धारा 304 भाग II सपठित धारा 149, धारा 326, 149 और धारा 148 के तहत कारावास की वह अवधि जो पहले ही काट ली गई है कम करते हैं।

चार पुरुष अपीलकर्ताओं में से सुरजन मुकदमे के समय 70 वर्ष के थे और गोकुल 66 वर्ष के । इस प्रकार सुरजन अब लगभग 73 वर्ष के हैं और गोकुल 70 से थोड़ा कम, उनकी आयु को ध्यान में रखते हुए हम सोचते हैं कि न्याय के हितों की पूर्ति होगी यदि उनकी कारावास की अवधि भी कम कर दी जाये, हम उनकी सजा कम करते हैं। इन आरोपी व्यक्तियों की किसी अन्य कार्यवाही के संबंध में आवश्यकता नहीं है तो इन अभियुक्तों

को रिहा कर दिया जाए। । हमें अन्य दो पुरुष अपीलकर्ताओं को दी गई सजा में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं दिखता है।

इस प्रकार आरोपी व्यक्तियों की अपील खारिज कर दी जाती है, सिवाय उनमें से आठ की सजा में संशोधन के। पंजाब राज्य द्वारा दायर अपील खारिज की जाती है।

अपील खारिज.

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक सरिता नौशाद**(न्यायिक अधिकारी)**द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः-यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिये स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और अधिकारिक उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंगे्रजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।